Introduction

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

: प्राक्कथन :

रामायण और महाभारत ये दो ग्रन्थ — ये दो महाकाव्य -- हमारी संस्कृति के मूलाधार और उपजीव्य ग्रन्थ हैं । भारतीय साहित्य चाहे वह फिर किसी भी भाषा का क्यों न हो , इन दो महा-ग्रन्थों से रसा-बसा है । कारण नितान्त स्पष्ट है , हमारी भारतीय संस्कृति , हमारा जन-जीवन , इन दो महाकाव्यों से निरंतर प्रेरणा व उर्जा प्राप्त करता रहा है । हमारे यहां अनपढ़ से अनपढ़ , निरक्षर भट्टाचार्य के मुंह से भी अनेक बार रामायण और महाभारत की बातें सुनने को मिलती हैं । इसका कारण है । ये बातें हमारे जीवन में रस-बस गई हैं । अभिवादन के रूप में हम "जय रामजी की " या " जय श्रीकृष्ण " कहते हैं । अपने निवास के प्रवेश द्वारों पर उनके नाम लिखते हैं । इस प्रकार हम उनमें पूरी तरह से ओत-प्रोत हो गए हैं ।

एक बार गुजराती के ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कवि उमाशंकर जोशी ने कहा था कि हम सब भारतीय साहित्यकार अपनी-अपनी भाषा में एक ही भारतीय संस्कृति का आलेखन कर रहे हैं । हमारे देश में भाषा, बोली , रीति-रिवाज , लिबास , खानपान , वातावरण आदि का गजब का वैविध्य पाया जाता है ; परन्तु इसी विविधता में भी एक प्रकार की एकता के हमें निरंतर दर्शन होते हैं । यह एकता है भारतीय आत्मा की । बाहर से भले हम अलग-अलग दिखते हैं , पर भीतर से हम एक हैं , क्योंकि हमारी आत्मा , हमारी संस्कृति एक है । दक्षिण के लोग गंगा-यमुना , काशी , हरद्वार , केदारनाथ , अमरनाथ आदि तीर्थ-स्थानों को उतना ही मानते हैं ; जितना पश्चिम भारत , मध्य भारत और उत्तर भारत के लोग मानते हैं । उसी प्रकार गोदावरी , कृष्णा , तुंगभद्रा इत्यादि पवित्र पुण्यतोया नदियों को तथा तिरूपति , कन्याकुमारी , रामेश्वरम् आदि तीर्थस्थानों को उत्तर भारत के लोग मानते हैं । इस प्रकार देखें तो धार्मिक-आध्यात्मिक-भावनात्मक आस्था की दृष्टि से यह देश एक है । ऊपर-ऊपर से भिन्नता , पर भीतर से एक प्रकार की एकता , अभिन्नता और अद्वैतता ।

फलतः आपको कोई भी भारतीय कवि , लेखक , साहित्यकार , चिंतक ऐसा नहीं मिलेगा जिसने कभी रामायण और महाभारत के वस्तु को न लिया हो । यहाँ तक कि प्रगतिवादी - मार्क्सवादी लेखक-कवि भी उसके वस्तु को लेकर अपने प्रगतिवादी ढंग से उसकी व्याख्या करते हैं ।

अस्तु , इन दो महाग्रन्थों के प्रति मेरी आस्था , मेरा विश्वास, मेरी जिज्ञासा सदैव रही है । शैशव काल में भी इनकी कहानियां मुझे प्रेरित , उद्वेलित , आंदोलित और आनंदित करती थीं । सद्-भाग्य से मेरी माता में भी उसी प्रकार के संस्कार थे । वस्तुतः ये संस्कार ही मुझ में संक्रमित हुए हैं । फलतः बचपन में जब भी रात को सोने से पूर्व मैं कहानी सुनने के लिए मचलता था , मां मुझे रामायण - महाभारत की कहानियां अपनी विशिष्ट मनोरंजक शैली में सुनाती थीं ।

मेरा बाल-मानस कल्पना की दुनिया में खो जाता और मैं कभी अर्जुन, कभी कर्ण, कभी अभिमन्यु से अपना तादात्म्य बिठा लेता। थोड़ा बड़ा हुआ। प्राथमिक स्कूल में जाने लगा और अक्षर-ज्ञान हुआ। शनैः शनैः पढ़ने लगा। तब सबसे ज्यादा मेरा ध्यान रामायण-महाभारत की कहानियों की ओर जाता था, जो उन दिनों बड़े टाईप में, विशेषतः बच्चों के लिए प्रकाशित होती थीं। स्कूल में "बालमित्र" आता था, उसको पढ़ना उन दिनों मेरे आनंद का विषय हुआ करता था। रामायण-महाभारत के अतिरिक्त उन दिनों मैंने पंचतंत्र, हितोपदेश, बत्तीस पुतलियों की वार्तायें, विक्रम-वैताल की कथाएं, राजा भोज और विक्रम की कथाएं, अकबर-बिरबल के किस्से, गिजुभाई बधेका की बाल-वार्ताएं आदि कहानियां पढ़ता रहता था। किन्तु इन सबमें सबसे ज्यादा आनंद मुझे रामायण-महाभारत की कथाओं में आता था। कृष्ण-चरित्र में भगवान श्रीकृष्ण की बाल-लीलाएं तथा उनके शैशवकालीन पराक्रम मुझे निरंतर आकर्षित व प्रेरित करते रहते थे। अभिप्राय यह कि शैशवकाल से ही रामायण-महाभारत के प्रति एक प्रकार का अनुराग मेरे मन को उल्लसित करता रहता था।

और यह उल्लास और संस्कार न केवल बने रहे, किन्तु दृढ़तर होते गये, प्रगाढ़ होते गये, जैसे-जैसे मैं शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ता रहा। हाईस्कूल के बाद सौभाग्य से मुझे महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा जैसे विश्व-विश्रुत विश्वविद्यालय के कला संकाय में पढ़ने का मौका मिला। यहां गुजराती के डा. शिरीष पंचाल, डा. लवकुमार देसाई तथा हिन्दी के डा. पारूकान्त देसाई, डा. अक्षयकुमार गोस्वामी, डा. भगवानदास कहार (मेरे निर्देशक), डा. प्रेमलता बाफना, डा. अनुराधा दलाल जैसे प्राध्यापक-प्राध्यापिकाओं से मेरा परिचय हुआ। सन् 1996 में मैंने मुख्य विषय हिन्दी के साथ बी.ए. की उपाधि हासिल की। आकाश खुलता गया। चिंतन का व्याप भी बढ़ता गया और साथ-साथ मेरा सपना भी बढ़ता गया।

मैंने हिन्दी (समग्र) विषय के साथ एम.ए. करने का निर्णय किया और तदनुसार सन् 1999 में मैंने एम.ए. की उपाधि प्रथम श्रेणी के साथ प्राप्त की ।

एम.ए. के उपरान्त पी-एच.डी. उपाधि हेतु शोध-कार्य करने की मेरी दिली इच्छा थी । एम.ए. में मेरा विशेष पत्र "उपन्यास" का था और उन दिनों यह परचा डा. पारूकान्त देसाई साहब और डा. भगवानदास कहार साहब पढ़ाते थे । उपन्यास के प्रश्नपत्र में छः उपन्यासों के अतिरिक्त एक युनिट के अन्तर्गत हिन्दी उपन्यास का विकास और "हिन्दी उपन्यास : स्वरूप विवेचन " को भी विस्तार के साथ पढ़ाया जाता था । उसी क्रम में उपन्यास के विभिन्न प्रकारों की ओर ध्यान गया और प्रेमचन्दोत्तर औपन्यासिक प्रवृत्तियों के अन्तर्गत "ऐतिहासिक उपन्यास " और " पौराणिक उपन्यास " की चर्चा सामने आयी । पौराणिक उपन्यासों की चर्चा करते हुए "दीक्षा" उपन्यास के लेखक डा. नरेन्द्र कोहली और उनकी रामायण और महाभारत विषयक उपन्यासमाला की चर्चा हुई । मुझे मेरा गन्तव्य मिल गया । मैंने अपने मन के तईं पक्का निर्धार कर लिया कि मुझे इसी लेखक पर कार्य करना चाहिए । उन दिनों में डा. पारूकान्त देसाई साहब हिन्दी विभाग के अध्यक्ष व प्रोफेसर हो गये थे । लेक्चरर , रीडर व प्रोफेसर इत्यादि श्रेणी-विभाजन की बात भी तभी समझ में आयी थी । अन्यथा हमारे सामने तो बस एक ही परिभाषा थी — जो कालेज में पढ़ाए सो प्रोफेसर । मैं अपने उपन्यास के इन दो गुरुओं से मिला और अपनी इच्छा प्रकट की और अन्ततः डा. भगवानदास कहार साहब के निर्देशन में मेरा यह कार्य अग्रसरित होगा यह निश्चित हुआ ।

तदुपरांत इस दिशा में मैंने अपना पढ़ना-लिखना शुरू किया । तभी मुझे ज्ञात हुआ कि अपने कथारस की तुष्टि हेतु पढ़ना एक बात है और पी-एच.डी. उपाधि हेतु शोध-कार्य के लिए पढ़ना दूसरी ही बात है । यहां बार-बार प्रत्यावर्तन होता है । पढ़े हुए को पुनः पुनः पढ़ना पड़ता है । सच्चे अर्थों में यहां विद्या का अभ्यास होता है ।

मेरे निर्देशक डा. भगवानदास कहार साहब ने "हास्य-व्यंग्य" पर डी. लिट. किया है, अतः एक और तथ्य भी मेरे सामने आया। मेरे आलोच्य लेखक डा. नरेन्द्र कोहली के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का एक अन्य पक्ष उद्घाटित हुआ। वह पक्ष है डा. कोहली के व्यंग्यकार होने का। बल्कि उनके लेखन का प्रारंभ ही एक व्यंग्यकार के रूप में हुआ था। बाद में "दीक्षा" उपन्यास ने उनके लेखन की दिशा को ही मानो बदल डाला।

पी-एच.डी. के पंजीकरण के पूर्व मुझे काफ़ी तैयारी करनी पड़ी। कहार साहब ने शोध-विधि एवं शोध-प्रक्रिया से मुझे अवगत कराया। "संदर्भ-संकेत" या "पाद-टिप्पणी" को कैसे लिया जाता है, "सन्दर्भानुक्रम" में कितनी बातें अनिवार्य हैं, ग्रन्थानुक्रमणिका या सहायक-ग्रन्थ सूची को कैसे तैयार किया जाता है, उसमें अकारादिक्रम का क्या महत्व है, उपजीव्य ग्रन्थ किसे कहते हैं, इन सब बातों की व्यवहारतः जानकारी दी। कुछ शोध-प्रबंधों को सामने रखकर विधिवत् इन सब तथ्यों से अभिज्ञ किया। डा. नगेन्द्र, डा. रवीन्द्र श्रीवास्तव, डा. राजूरकर, डा. विद्या-निवास मिश्र, गुजरात के शोध-ऋषि एवं प्रकांड पंडित परम पूज्य के.का. शास्त्री प्रभृति विद्वानों ने शोध-अनुसंधान विषयक कतिपय महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रणयन किया है, उन ग्रन्थों को भी एक बार देख जाने का परामर्श दिया। अन्ततः दिनांक 23-8-1999 को " रामायण और महाभारत के कथावस्तु पर आधारित डा. नरेन्द्र कोहली के उपन्यास : एक अनुशीलन " विषय को लेकर डा. भगवानदास कहार साहब के निर्देशन में पी-एच.डी. हेतु मेरा नामांकन (Registration) हो गया।

नामांकन के पश्चात् विषय को लेकर गहन अध्ययन-अनुशीलन का प्रारंभ हुआ। डा. नरेन्द्र कोहली के उक्त-विषयक उपन्यास "अभ्युदय खण्ड - 1" और "अभ्युदय खण्ड-2" तथा "महासमर - 1" से लेकर "महासमर-8" मेरे उपजीव्य-ग्रन्थ हैं। अतः उनको मैंने खरीद लिया। "अभ्युदय" के दो खण्डों में उनके रामायण पर आधारित उपन्यास — "दीक्षा", "अवसर", "संघर्ष की ओर" "युद्ध" ये चार उपन्यास संक-

लित हैं । "महासमर-1 " से लेकर "महासमर-8 " में क्रमशः "बंधन" , "अधिकार" , "कर्म" , ×धर्म×8× "धर्म" , "अंतराल" , "प्रच्छन्न" , "प्रत्यक्ष" और "निर्बन्ध " नाम से महाभारत की कथा को आधुनिक सन्दर्भों में उपन्यस्त किया गया है ।

उक्त उपन्यासों को शोध की दृष्टि से कई-कई बार पढ़ना पड़ा । बीच-बीच में अनेक दैहिक-भौतिक तथा पारिवारिक व्यवधान भी आते गये । अन्ततः छः सात वर्षों के कठोर परिश्रम व शोधाभिमुख अध्ययन- अनुसंधान के उपरान्त इस कार्य को संपन्न करने की स्थिति में पहुंचा हूं । अध्ययन की सुविधा तथा शोध-विषय के सम्यक् निर्वाह हेतु शोध-प्रबंध को निम्नलिखित छः अध्यायों में विभक्त किया गया है —

§1§ प्रथम अध्याय : विषय-प्रवेश ।

§2§ द्वितीय अध्याय : आलोच्य लेखक : जीवन-परिचय एवं कृतित्व ।

§3§ तृतीय अध्याय : रामायण की कथावस्तु पर आधारित डा. कोहली के उपन्यास ।

§4§ चतुर्थ अध्याय : महाभारत की कथावस्तु पर आधारित डा. कोहली के उपन्यास ।

§5§ पंचम् अध्याय : डा. कोहली के उपन्यासों में निरूपित रामायण और महाभारत के प्रमुख पात्र ।

§6§ षष्ठ अध्याय : उपसंहार ।

प्रथम अध्याय "विषय-प्रवेश" का है , अतः उसमें विषय को प्रवर्तित करते हुए निरूपित किया गया है कि भारतीय भाषाओं में उन्नीसवीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध से उपन्यास की प्राप्ति होने लगती है । बंगला उपन्यासकार टेकचंद ठाकुर कृत "आलालेर घरेर दुलाल" § 1857 ई. § , मराठी उपन्यासकार बाबा पदमनजी कृत "यमुनापर्यटण " §1857 ई. § , असमिया उपन्यासकार ए. के. गर्नी कृत "कामिनीकान्तार " § 1877 ई. § , तेलुगु उपन्यासकार कोककोंडा वेंकटरत्नम् पन्तुलु कृत "महाश्वेता" § 1867 ई. § ,

तमिल उपन्यासकार वेदनायकम् पिल्ले कृत "प्रतापमुदलियार चरितम् " §1869 ई. § , मलयालम उपन्यासकार आर्च डीकन के. कोशी कृत "पुलेली कुंचु " § 1882 ई.§ , गुजराती उपन्यासकार नंदशंकर तुळजाशंकर मेहता कृत "करणघेलो" §1866 ई. § आदि उपन्यासों को उन-उन भाषाओं के प्रथम उपन्यास माने गए हैं । हिन्दी के कुछ विद्वान लाला श्रीनिवास दास लिखित "परीक्षागुरू" को प्रथम उपन्यास मानते हैं , तो कुछ विद्वान पंडित श्रद्धाराम फुल्लौरी कृत "भाग्यवती" को प्रथम उपन्यास मानते हैं जिनका रचनाकाल क्रमशः सन् 1882 और 1878 है । यहीं पर उपन्यास को एक नयी विधा बताते हुए पुराने कथा-साहित्य से उसका भिन्नत्व स्पष्ट किया गया है । इस संदर्भ में औपन्यासिक कथावस्तु , उपन्यास में वैयक्तिकता का महत्त्व , चरित्र-चित्रण का महत्त्व , उपन्यास की कथासूत्र § स्टोरी-मोटिफ § रहितता , तार्किकता , देशकाल या वातावरण का महत्त्व जैसे मुद्दों की पड़ताल की गई है । तत्पश्चात् पूर्व-प्रेमचन्दकाल तथा प्रेमचन्दकाल की औपन्यासिक प्रवृत्तियों को रेखांकित करते हुए प्रेमचंद के अपरिहार्य योगदान व महत्त्व को उद्घाटित किया गया है । तदुपरांत इसी अध्याय में प्रेमचन्दोत्तर औपन्यासिक प्रवृत्तियों को चिह्नित करते हुए उन पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है । प्रेमचन्दोत्तर औपन्यासिक प्रवृत्तियों में सामाजिक उपन्यास ,ऐतिहासिक उपन्यास , मनोवैज्ञानिक उपन्यास, समाजवादी या मार्क्सवादी उपन्यास , आंचलिक उपन्यास , राजनीतिक उपन्यास , पौराणिक उपन्यास , व्यंग्यात्मक उपन्यास , साठोत्तरी उपन्यास , समकालीन उपन्यास आदि प्रवृत्तियां उल्लेखनीय हैं । इनमें अंतिम दो प्रवृत्तियों के साथ काल-विषयक अवधारणा भी जुड़ी हुई है । पिछले पन्द्रह-बीस वर्ष के उपन्यास समकालीन उपन्यासों के अन्तर्गत आते हैं । इस प्रकार प्रारंभ से लेकर अद्यावधि तक के उपन्यासों और उपन्यासकारों पर एक विहंगम दृष्टिपात भी हो गया है । डा. नरेन्द्र कोहली ने संभवतः सन् 1960 से लिखना प्रारंभ किया है , अतः उनका रचना-काल लगभग पैंतालीस - छियालीस साल का हो गया है । प्रेमचन्दोत्तर औपन्यासिक प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए

"पौराणिक उपन्यास" की ओर भी संकेत किया गया था । किन्तु वहां उसकी चर्चा भर हो पायी थी । अतः इसी अध्याय में "पौराणिक उपन्यास ** " पर विस्तृत चर्चा की गयी है , क्योंकि हिन्दी उपन्यास-साहित्य के कतिपय विद्वानों ने कई पौराणिक उपन्यासों को ऐतिहासिक उपन्यास के रूप में घोषित किया है । अतः इन दोनों के बीच के व्यावर्तक लक्षणों की चर्चा अपेक्षित है । यहां इनके बीच की विभाजक रेखा को स्पष्ट करने के उद्देश्य से इतिहास और पुराण की चर्चा को भी एक विस्तार दिया गया है । इसके लिए अनेक प्रमाणों को जुटाने का भी उपक्रम यहां हुआ है । इसके पश्चात् इसी अध्याय के अन्तर्गत इतिहास और पुरातत्व-विद्या (Archaeology) , पुराण और संस्कृति आदि मुद्दों की पड़ताल करते हुए उसके आलोक में पुनः पौराणिक उपन्यास पर विचार प्रस्तुत हुए हैं । इसी क्रम में डा. नरेन्द्र कोहली के कतिपय पौराणिक उपन्यासों की भी चर्चा की गई है । पौराणिक उपन्यासों में "मिथक" या "पुराकथा " का प्रयोग होता है । प्रस्तुत अध्याय में एतद्विषयक डा. कोहली के विचारों को भी रखा गया है । अध्याय के अन्त में समग्रावलोकन की प्रक्रिया के द्वारा कुछ निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं । अध्याय के अन्त में विधिवत् सन्दर्भानुक्रम प्रस्तुत है ।

द्वितीय अध्याय का शीर्षक है : " आलोच्य लेखक : जीवन-परिचय एवं कृतित्व " । अतः प्रस्तुत अध्याय में डा. नरेन्द्र कोहली के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है । प्रारंभ में ही निरूपित कर दिया है कि जिस प्रकार वास्तविक सामाजिक , ऐतिहासिक , मनोवैज्ञानिक , आंचलिक उपन्यासों का सूत्रपात क्रमशः प्रेमचन्द , वृन्दावनलाल वर्मा , जैनेन्द्रकुमार और फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा हुआ है ; ठीक उसी प्रकार वास्तविक पौराणिक उपन्यासों का सूत्रपात डा. नरेन्द्र कोहली द्वारा हुआ है । कुछ विद्वानों का अभिमत है कि लेखक के व्यक्तित्व और कृतित्व ** को अलग-अलग रखना चाहिए और किसी लेखक के कृतित्व पर विचार करते समय , केवल उसकी रचनाशीलता पर विचार करना चाहिए , उसके

व्यक्तित्व पर नहीं । इस संदर्भ में टी.एस. इलियट प्रबोधित निर्वैयक्तिकता के सिद्धान्त को भी उद्धृत किया जाता है , परन्तु उक्त सिद्धान्त में केवल यही कहा गया है कि लेखक या कवि का मूल्यांकन करते समय उसका रचनात्मक कृतित्व ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए , पर उस लेखक या कवि पर , उसके जीवन पर विचार ही नहीं करना चाहिए , ऐसा वहां नहीं कहा गया है । बल्कि समालोचना की एक पद्धति -- मनोवैज्ञानिक समालोचना — में तो लेखक या कवि के जीवन के परिप्रेक्ष्य में उसकी रचनाओं को देखा जाता है । बहरहाल लेखक की कई रचनाओं को समझने के लिए , मनोवैज्ञानिक दृष्टया , उसके जीवन के कई प्रसंग या पक्ष सहायता पहुंचाते हैं । कहा जाता है कि लेखक या कवि भी सर्जक है , ईश्वर है । अतः वह उसकी रचना में कहीं-न-कहीं होता है । किन्तु उसकी प्रक्रिया वही है -- " प्रेजेण्ट एवरीव्हेर बट विसिबल नोव्हेर. " -- अर्थात् सर्वत्र विद्यमान , किन्तु दृश्यमान कहीं भी नहीं । पश्चिम में तो इस दृष्टि से लेखकों और कवियों पर , उनके जीवन पर, अनेक किताबें लिखी गई हैं । उनकी डायरियों , आत्मकथाओं और जीवनियों का अध्ययन किया जाता है । अभिप्राय यह कि लेखक के कृतित्व को , उसके कृतित्व में आये विभिन्न मोड़ों और पड़ावों को समझने के लिए उसके जीवन पर एक दृष्टि डालना आवश्यक हो जाता है ।

डा. नरेन्द्र कोहली का जन्म 6 जनवरी , सन् 1940 ई. को सियालकोट में हुआ , जो अब पाकिस्तान में है । यहां लेखक के पितामह , उनकी दो ~~दरम~~ दादियां — बड़ी और छोटी — उनके पिता , चाचा-ताऊ , माता, भाई-बहन आदि की संक्षिप्त चर्चा की गई है । बहुत छोटी उम्र में उन्होंने विभाजन के झटके को झेला है । लेखक जब दूसरी कक्षा में थे तभी उनके परिवार को सियालकोट से जमशेदपुर आ जाना पड़ा था । शुरू में उनके परिवार को काफ़ी संघर्ष करना पड़ा । सड़क की पटरी पर फल बेचना और छोटे-से आउट-हाउस में रहना बड़ा कष्टदायक होता था । लेखक की प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा उर्दू में हुई थी । कालेज में आकर उन्होंने हिन्दी साहित्य को अपना मुख्य

विषय बनाया था । गरीबी में पलने के बावजूद लेखक में हीनता-ग्रन्थि का अभाव दिखता है । शायद मनोवैज्ञानिक एडलर का "क्षति-पूर्ति सिद्धान्त " भी यही कहxxx कहता है । पर बहुत कम लोग "क्षति-पूर्ति" द्वारा हीनता-बोध को जीत पाते हैं । उसके लिए दुर्धर्ष संघर्ष-शक्ति का होना आवश्यक है , जो हमें लेखक में मिलती है । पढ़ाई में लेखक हमेशा अव्वल रहे हैं । वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भी उनका डंका बजता था । माध्यमिक शिक्षा के दौरान ही साहित्यिक संस्कार उनमें अंकुराने लगे थे । अतः जब जमशेदपुर में कालेज xxx में दाखिला लिया तब उसके लिए उनको एक उन्मुक्त वातावरण मिला । प्रारंभ में पंत-प्रसाद-महादेवी-निराला के प्रभाव से उनकी ही शब्दावली में उन्होंने ढेरों प्रणय-कविताएं लिख डाली थीं , किन्तु बहुत शीघ्र ही उनको अपनी मर्यादा व सीमा का ज्ञान हो गया और उनकी लेखन-नैया का सुकान कथा-साहित्य की ओर हो गया । सन् 1980 में "कहानी" पत्रिका में उनकी "दो हाथ" कहानी प्रकाशित हुई । लेखक उसे ही अपनी प्रथम रचना मानते हैं । हालांकि उसके पूर्व "सरिता" पत्रिका में "नये अंकुर" स्तम्भ के अन्तर्गत उनकी एक कहानी " पानी का जग , गिलास और केतली " प्रकाशित हुई थी , पर "सरिता " को बहुत-से लोग स्तरीय साहित्यिक पत्रिका नहीं मानते । जबकि "कहानी" पत्रिका तो कहानियों की ही पत्रिका थी ।

"दो हाथ" से आरंभित उनकी रचना-यात्रा अद्यावधि चल रही है । डा. कोहली बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं , अतः उन्होंने xxxxxxxxxxxx विभिन्न गद्य-विधाओं में साहित्य की सृष्टि की है । उपन्यासकार के अतिरिक्त वे एक अच्छे व्यंग्यकार ,नाटककार , कहानीकार व आलोचक हैं । उनके समग्र साहित्य की तालिका भी इसी अध्याय में प्रस्तुत है । परन्तु इधर डा. कोहली का जो नाम और प्रतिष्ठा है , वह उनके उपन्यासों के कारण , और उसमें भी , पौराणिक उपन्यासों के कारण है । रामायण और महाभारत पर उनकी जो उपन्यासमाला है , उसका उल्लेख तो पूर्ववर्ती पृष्ठों में हो चुका है । इनके अलावा उनका

एक ऐतिहासिक उपन्यास है जिसमें उन्होंने लीक से हटकर सम्राट हर्षवर्द्धन के भाई राज्यवर्द्धन के चरित्र को उद्घाटित किया है । इनके अतिरिक्त कृष्ण-सुदामा की मैत्री को केन्द्र में रखकर उन्होंने एक "अभिज्ञान" नामक पौराणिक उपन्यास दिया है । " तोड़ो , कारा तोड़ो " उनका स्वामी विवेकानंद के जीवन पर आधारित उपन्यास है । वस्तुतः स्वामीजी पर उपन्यास लिखना अपने आप में एक महान चुनौती है । स्वामीजी का जीवन हमारे निकट के अतीत की कहानी है । सम्प्रति विश्व के कोने-कोने में उनका शिष्य समुदाय बिखरा पड़ा है और चूंकि स्वामीजी स्वयं एक युगदृष्टा , मंत्रदृष्टा व्यक्ति रहे हैं , अतः उनके शिष्यों की प्रबुद्धता पर भी कोई प्रश्नचिह्न नहीं लग सकता । वे सब चेतना-संपन्न व्यक्ति हैं । उनमें कोई "गाडरिया -प्रवाह " वाली बात नहीं है । ऐसे में कोई काल्पनिक बात लिखना , अऐतिहासिक बात लिखना , एक बवाल खड़ा कर सकता है । फिर भी लेखक ने यह साहस किया है । यह उनकी अप्रतिम लेखकीय अपराजेय आस्था का सूचक है ।

उनके लेखकीय व्यक्तित्व के अतिरिक्त उनके व्यक्तित्व के अन्य पहलू भी हमें उपलब्ध होते हैं । एक प्रामाणिक निष्ठावान छात्राभिमुख अध्यापक , एक ईमानदार व उत्तरदायित्वपूर्ण पति , एक स्नेह-वत्सल पिता , एक मातृभक्त-पितृभक्त पुत्र और एक उत्साहवर्द्धक , उल्लासदायी मित्र व सुहृद । इन सबसे ऊपर एक बड़ा ही प्यारा , जिन्दादिल , हरदिल अजीज इन्सान जो अपने मातहतों का भी पूरा-पूरा ध्यान रखता है । इन सब मुद्दों को यहां करीने से उकेरा गया है ।

तृतीय अध्याय में रामायण की कथावस्तु पर आधारित डा. कोहली के उपन्यासों का मूल्यांकन करने की एक सम्यक् चेष्टा की गई है । भारतीय साहित्य में यत्र-तत्र-सर्वत्र राम का चरित्र उपलब्ध होता है । कहीं उसे महानायक , जननायक , युग-पुरुष का रूप दिया गया है ; तो कहीं उन्हें परब्रह्म परमेश्वर विष्णु का अवतार माना गया है । यह स्वरूप अत्यन्त ही दिव्य , भव्य , अलौकिक और सर्वव्यापी है । प्रस्तुत अध्याय

में सर्वप्रथम रामकाव्य की पृष्ठभूमि प्रस्तुत की गई है । वैदिक साहित्य से लेकर संस्कृत रामायण काव्य , संस्कृत प्रबंध काव्य , संस्कृत नाटक , पालि-प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य , हिन्दी साहित्य — पृथ्वीराज रासो से लेकर अद्यावधि तक का ; तमिल रामायण , तेलुगु रामायण , बंगला रामायण , पंजाबी रामायण , गुजराती रामायण यों पूरे भारतवर्ष में उसका व्याप है । भारत के अलावा बृहत् भारत — ब्रह्मदेश , इण्डोनेशिया , जावा-सुमात्रा , मोरीशियस आदि अनेक देशों में हमें रामकाव्य , रामायण , रामलीला , रामकथा प्राप्त होती है । डा. कोहली की उपन्यासमाला के अतिरिक्त भी "वयं रक्षामः " § आचार्य चतुरसेन शास्त्री § , "अपने अपने राम " § भगवानसिंह § , "पवनपुत्र " § डा. भगवतीशरण मिश्र § , "मानस का हंस " § अमृतलाल नागर § प्रभृति उपन्यासों में रामकथा विविध ढंग से , विविध व्याख्याओं सहित उपन्यस्त हैं । हमारे आलोच्य लेखक डा. नरेन्द्र कोहली ने "दीक्षा" , " अवसर" , " संघर्ष की ओर " और "युद्ध" यों चार भागों में xxxx रामकथा का निरूपण आधुनिक , तार्किक परिणति के साथ किया है । बांगलादेश के पूर्व की राजनीतिक गतिविधियों , पाकिस्तानियों के पूर्व-पाकिस्तान के बुद्धिजीवियों पर अत्याचार , बुद्धि-जीवियों का विद्रोह , एक दूसरे देश को आततायियों से मुक्त करने हेतु किया गया श्रीमती इन्दिरा गांधी का पश्चिम पाकिस्तान के साथ युद्ध , इन सब स्थितियों ने लेखक के भीतर सोये विश्वामित्र को जगा दिया और फलतः "दीक्षा" उपन्यास की सृष्टि हुई । "दीक्षा" को जो अभूतपूर्व सफलता मिली , हिन्दी जगत में उसका जो स्वागत हुआ , उसके कारण लेखक की रामकथा-यात्रा चल पड़ी । उक्त चार उपन्यासों का मूल्यांकन और अनु-शीलन इस तृतीय अध्याय में समेकित हुआ है । डा. कोहली ने केवल लंका-विजय तक की कथा को लिया है । राम के चरित्र को लेकर आधु-निक बुद्धिवादियों में जो अनेक सवाल उठाये जाते हैं उनको अपने ढंग से निरस्त्र किया है । मूल रामकथा में जो मिथक कथाएं आती हैं उनका निरसन किया है और चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को प्रधानता दी है ।

पहले निर्दिष्ट किया गया है कि रामायण और महाभारत ये दो महाग्रन्थ भारतीय साहित्य की कथा-मंजूषा है । इनकी पिटारी में सहस्त्रों कहानियां हैं । सम्पूर्ण भारतीय साहित्य इन दो महाग्रन्थों द्वारा रचा-रसा गया है । रामायण में रघुकुलकेतु राम का चरित्र है, किन्तु महाभारत में तो कुरुवंश की कथा है । किस प्रकार पारस्परिक कलह में इस पुरा-विश्रुत वंश का नाश होता है उसकी यथार्थ कथा महाभारत है । रामायण जहां आदर्शवाद से प्रभावित है, वहां महाभारत हमारे जीवन के कटु यथार्थ को व्यंजित करता है । हमारे युग की ऐसी कोई घटना न होगी, जिसके समान घटना महाभारत में न घटी हो । तभी तो कहा गया है — "यन्न भारते, तन्न भारते" । अर्थात् जो महाभारत में है वह सर्वत्र है और जो महाभारत में नहीं है, वह कहीं भी नहीं है । इसका एक उदाहरण हमें शिखण्डी के किस्से के रूप में मिलता है । शिखण्डी का किस्सा सीधे लिंग-परिवर्तन का किस्सा है और इधर आयेदिन समाचार पत्रों में हमें लिंग-परिवर्तन के, एतद्विषयक शल्य-चिकित्सा के, किस्से सुनाई पड़ते हैं । कथा की दृष्टि से महाभारत का व्याप बहुत ही विस्तृत है । रामायण की कथा एक दिशा में गति करती है, किन्तु यहां पर अनेक-स्तरीयता है, अनेक कथाएं हैं, यहां तक कि रामायण की कथा भी हमें महाभारत के वनपर्व, द्रोणपर्व और शांतिपर्व में उपलब्ध होती है । महाभारत की इस विश्व-विश्रुत कथा को आधार बनाकर आधुनिक, तार्किक परिणति के साथ, मिथक-कथाओं और चमत्कारिक कथाओं की बौद्धिक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए डा. नरेन्द्र कोहली ने आठ उपन्यासों की रचना की है -- 1. बंधन, 2. अधिकार, 3. कर्म, 4. धर्म, 5. अंतराल, 6. प्रच्छन्न, 7. प्रत्यक्ष और 8. निर्बन्ध । इनका ही दूसरा नाम महासमर भाग -1 से 8 है । चतुर्थ अध्याय में इन सब उपन्यासों का मूल्यांकन और अनुशीलन किया गया है । यह "बंधन" से "मुक्ति" तक की यात्रा है । इसमें हमारा धर्मशास्त्र, न्यायशास्त्र और समाजशास्त्र तथा तत्कालीन इतिहास है ।

पंचम अध्याय में डा. कोहली के उपन्यासों में निरूपित रामायण

और महाभारत के कतिपय प्रमुख पात्रों की चर्चा की गई है । रामायण के प्रमुख पात्रों में राम , सीता , लक्ष्मण , दशरथ , कौशल्या , कैकेयी , सुमित्रा, विश्वामित्र , वसिष्ठ , अगस्त्य , शूर्पणखा , वाली , सुग्रीव , हनुमान, रावण , मंदोदरी , कुंभकर्ण , विभीषण , मेघनाद , जनक , तारा , रूमा आदि हैं ; तो महाभारत के प्रमुख पात्रों में शान्तनु , भीष्म , सत्यवती, कृष्ण द्वैपायन व्यास , अम्बा , अम्बिका , अम्बालिका , धृतराष्ट्र , पांडु , विदुर , गांधारी , कुन्ती , माद्री , युधिष्ठिर , भीम , अर्जुन , नकुल , सहदेव , कृष्ण , बलराम , द्रुपद , द्रौपदी , सुभद्रा , हिडिम्बा , दुर्योधन , शकुनि , कर्ण , दुःशासन , अश्वत्थामा, द्रोणाचार्य , कृपाचार्य , जरासंध , शिशुपाल , घटोत्कच , अभिमन्यु , युयुत्सु आदि की चर्चा हमने की है । इनके अतिरिक्त दोनों के गौण पात्रों का भी उल्लेख किया गया है ।

छठा अंतिम अध्याय "उपसंहार" का है , उसमें विषय का महत्त्व , उसकी उपादेयता , समग्र शोध-प्रबंध का सार-संक्षेप , निष्कर्ष , भविष्यत् संभावनाओं इत्यादि को उकेरा गया है । शोध-प्रबंध के अन्त में ग्रन्थानुक्रमणिका (बिब्लिओग्राफी) को विविध परिशिष्टों में रखा गया है । उसमें उपजीव्य ग्रन्थों की सूची , सहायक ग्रन्थ सूची (संस्कृत) , सहायक ग्रन्थ सूची (हिन्दी) , सहायक ग्रन्थ सूची (अंग्रेजी) , कोश-ग्रन्थ तथा अप्रकाशित शोध-प्रबंध सूची इत्यादि को अकारादिक्रम से प्रस्तुत किया गया है । "उपसंहार" को छोड़कर प्रत्येक अध्याय के अन्त में निष्कर्ष एवं संदर्भानुक्रम दिए गए हैं ।

अन्ततः शोध-प्रबंध विद्वत्जनों के सम्मुख है । अपनी क्षमता और शक्ति की सीमा और मर्यादा से भलीभांति अवगत हूं , अतः क्षतियों के लिए प्रथमतः क्षमाप्रार्थी हूं । प्रबंध में जिन विद्वानों तथा विदुषियों के ग्रन्थों या लेखों से किसी भी प्रकार की सहायता प्राप्त हुई है , उस सबके प्रति मैं श्रद्धावनत हूं ।

हमारी संस्कृति में माता-पिता का स्थान सर्वोपरि है । अतः इस प्रसंग में मैं पिता नटुभाई तथा माता भारतीबेन के चरणों में अपनी समूची श्रद्धा-भक्ति समर्पित करता हूं । मेरे पालन-पोषण में , शिक्षा-दीक्षा में , मेरे समग्र व्यक्तित्व के निर्माण में मेरी माता की जो साधना है , तपश्चर्या है , वह अद्वितीय है । विधाता से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि मुझे यही मां जनमोजनम मिलें ।

माता-पिता के पश्चात् गुरु का स्थान आता है । हमारे यहां गुरु को ब्रह्मा , विष्णु और महेश्वर कहा गया है , क्योंकि ब्रह्मा की तरह वह अपने शिष्य को गढ़ता है , विष्णु की भांति पालन-पोषण करता है और महेश की भांति अपने दोषों और खामियों का नाश करता है । वैसे तो विभाग के सभी तत्कालीन प्राध्यापक मेरे गुरु हैं , उन सबको मैं वंदन करता हूं । किन्तु इस समग्र प्रक्रिया में मेरे जो गुरु हैं , वे मेरे निर्देशक , डा. भगवानदास कहार साहब हैं । उनकी असीम कृपा के बिना यह भगीरथ कार्य करना मेरे लिए संभव नहीं था । उनके पास भी उनकी अपनी संपन्न लायब्रेरी है । उसका मैंने भरपूर लाभ उठाया है । अतः उनके प्रति , गुरु-पत्नी के प्रति और उनकी संतानों के प्रति मै हृदय से आभार व्यक्त करता हूं । उनकी विद्वता और शिष्य-वत्सलता का मैं कायल हूं । उनके ऋण से उऋण होना कदाचित् इस जन्म में तो संभव नहीं है । मेरे नामांकन के समय के विभागाध्यक्ष प्रोफेसर डा. पारुकान्त देसाई भी समय-समय पर मेरा उत्साह-वर्धन करते रहे हैं । उनके पुस्तकालय का भी मैंने भरपूर लाभ उठाया है । अतः उनके चरणों में भी मैं अपनी श्रद्धा-भक्ति समर्पित करता हूं ।

विभाग के अन्य वरिष्ठ प्राध्यापक -प्राध्यापिकाओं में निवृत्त डा. अक्षयकुमार गोस्वामी साहब , निवृत्त डा. प्रेमलता बाफना बहन , निवृत्त डा. अनुराधा दलाल , आदि सबके प्रति मैं अपनी हार्दिक श्रद्धा व्यक्त करता हूं । विभाग के वर्तमान अध्यक्ष डा. विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ने हमेशा मेरा उत्साह बढ़ाया है और मेरे प्रत्येक कार्य में सहायता

पहुंचायी है , अतः उनका मैं हृदय से आभारी हूं । विभाग के अन्य अध्यापकों में वरिष्ठ रीडर डा. शैलजा भारद्वाज , डा. ओमप्रकाश यादव साहब , डा. शन्नो पांडेय , डा. कल्पना गवली , डा. दक्षा मिस्त्री , डा. कनुभाई वी. निनामा साहब , डा. एन.एस. परमार आदि सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं । डा. मनीषा ठक्कर मेरी गुरु-बहन रही है । उनके शोध-प्रबंध से भी मैं लाभान्वित हुआ हूं , अतः उनके प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं ।

पत्नी को हमारे यहां सहधर्मचारिणी कहा गया है । इस समग्र प्रक्रिया में मुझे मेरी पत्नी उषा का साथ-सहयोग व प्रेम मिलता रहा है । पुत्री नुपूर के प्रति दायित्वबोध और पुत्र प्रिन्स के प्रति वात्सल्य भाव मेरे अन्तर्मन को भावनात्मक आधार प्रदान करता रहा है । अतः इस समय उनकी स्मृति सहज है ।

सम्प्रति पिछले कुछेक वर्षों से कला-संकाय के प्राचार्य (डीन) प्रोफेसर डा. आर.जे. शाह साहब हैं । वे इतिहास के तज्ज्ञ विद्वान हैं । इतिहास और पुराण से सम्बद्ध अनेक मसलों में मुझे उनसे परामर्श मिलता रहा है । दूसरे कुछेक सामाजिक-पारिवारिक -भौतिक कारणों से मेरे कार्य में कुछ विलम्ब हुआ , फलतः मुझे एक्सटेंशन मांगना पड़ा । उसमें उन्होंने मुझे हर तरह से प्रोत्साहित किया । अतः उनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं ।

संस्कृत कवि जयदेव पीयूषवर्षी के "प्रसन्न राघव " नाटक के प्रारंभ में नट सूत्रधार से प्रश्न करता है कि प्रायः सभी कवि श्रीराम के ही गुणों का वर्णन क्यों कर रहे हैं ? उस प्रश्न का उत्तर देते हुए सूत्रधार कहते हैं --

" स्वसूक्तीनाम पात्रं रघु तिलकमेकं कलयती ,
कवीनां कों दोषः ? न तु गुणगणानामवगुणः ।

यदेतैर्निश्शेषैरपगुणलुब्धेरिव ,

त्वसावेकश्चक्रे सततसुखसंवास वसतिः ।।

§ प्रसन्न राघव -- 1 : 12 §

अर्थात् इसमें कवियों का कोई दोष नहीं है । वह दोष तो उन अनिंद्य गुणग्रामों का है ; जो समष्टि रूप में श्रीराम में ही निवास करते हैं । फिर भला कवि सम्पूर्ण सद्गुणों के आश्रय - स्थल श्रीराम की कथा का वर्णन क्यों न करें ? यहां मैं भी यही बात भारतीय संस्कृति के इन दो गौरव ग्रन्थों के लिए करते हुए विरमता हूं ।

विनीत ,

दिनांक : 27-2-2007

Chauhan R.N.

राजेश नटुभाई चौहाण ,
शोध-छात्र , हिन्दी विभाग.
म. स. विश्वविद्यालय , बड़ौदा ।